



हिन्दी माध्यम का सर्वश्रेष्ठ संस्थान निर्माण IAS

सफलता का पर्याय कमल देव (K.D.)

DR. RAHEES SIR

शंघाई : सहयोग, संभावनाएं, अवसर एवं चुनौतियां

नयी विश्वव्यवस्था और बहुध्रुवीयता के बीच एससीओ की प्रासंगिकता

नयी विश्वव्यवस्था को सुनिश्चित करने में क्षेत्रीय संगठन एक निर्णायक भूमिका की ओर बढ़ते दिख रहे हैं। कारण यह कि, ये क्षेत्रीय संगठन एक तरफ वैश्विक बहुध्रुवीयता के प्रतीक की तरह हैं तो दूसरी तरफ क्षेत्रीय विकास के टापुओं की तरह हैं। यही वजह है कि दुनिया के छोटे-छोटे देशों से लेकर महाशक्तियों तक इन्हें उम्मीदों से सम्पन्न निगाहों के साथ-साथ कुछ विशिष्ट उद्देश्यों को पूरा करने के साधनों के (ये विशेषता महाशक्तियों में होती है) रूप में देख रही हैं। कई क्षेत्रीय संगठनों ने ऐसे प्रतिमान भी कायम किए हैं, जिनके चलते उनकी उपादेयता व प्रासंगिकता आज के उस विश्व में, जहां प्रतिस्पर्धाएं असम्भ्रांतता का शिकार हो रही हों, कहीं अधिक हो सिद्ध हो रही है। शंघाई सहयोग संगठन ऐसे क्षेत्रीय संगठनों में एक बेहद प्रभावशाली है जो एशियाई महाद्वीप में अपने बढ़ते महत्व और सेन्ट्रलाइज होने के कारण प्रायः 'एलायंस ऑफ एशिया' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। आर्थिक ताकत और राजनीतिक प्रभाव की दृष्टि से दुनिया का सबसे बड़ा क्षेत्रीय संगठन तथा दुनिया के सबसे मजबूत सैन्य गठबंधनों में से एक होने के साथ-साथ यह यूरेशियाई जमीन के एक बड़े भाग को कवर करता है और लगभग आधी मानवशक्ति से सम्पन्न है। स्वाभाविक है कि भारत का इस संगठन में पूर्ण सदस्य के रूप में शामिल होना और शिरकत करना, हर्ष का एक विषय है। लेकिन क्या वास्तव में यह भारत के लिए केवल एक अवसर है या फिर चुनौती भी है? क्या इसमें मौजूद विरोधाभास विशेषकर भारत के लिए नयी चुनौतियां पेश नहीं करेंगे? यदि ऐसा हुआ तो भारत को निरन्तर संतुलन-पुनर्संतुलन (बैलेंसिंग-रिबैलेंसिंग) प्रक्रिया से गुजरना पड़ेगा जो अवसरों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करेगी। फिर भारत कैसे इस संगठन से जुड़े लाभों को सुनिश्चित कर पाएगा?

किस तरह से देखें एससीओ को?

26 अप्रैल 1996 को कजाकिस्तान, चीन, किरगिस्तान, रूस और तजाकिस्तान के राष्ट्रध्यक्षों द्वारा सीमा क्षेत्रों में गहरे सैन्य भरोसे के लिए एक संधि की गयी थी, यही संधि इस संगठन के आरम्भ रूप यानि शंघाई 5 (शंघाई फाइव) की स्थापना का आधार थी। 24 अप्रैल 1997 को इन देशों द्वारा मॉस्को में एक बैठक में सीमा क्षेत्र में सैन्य बलों में कटौती संधि (ट्रीटी ऑन रिडक्शन ऑफ मिलिट्री इन बॉर्डर रीजन) पर हस्ताक्षर किए गये। ताकि सदस्य देश आपसी रक्षा प्रतिस्पर्धा से निकलकर बाहर आ सकें। वर्ष 2001 में उज़्बेकिस्तान को शंघाई 5 में शामिल करने के बाद जून 2001 में शंघाई 5 'शंघाई सहयोग संगठन' में परिवर्तित हो गया। इस परिवर्तन के साथ ही सभी छः सदस्यों ने शंघाई 5 की मैकेनिज्म को बेहतर बनाने हेतु प्रतिबद्धता प्रकट की और उच्च स्तरीय सहयोग के लिए कुछ उद्देश्य सुनिश्चित किये गये। इस अवधि के व्यतीत होने के साथ-साथ इस संगठन ने जहां एक ओर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों को नये रूप में परिभाषित करने की कोशिश की वहीं दूसरी ओर क्षेत्रीय सहयोग व सुरक्षा सम्बंधी प्रयासों को नई दिशा भी प्रदान की। 1998 में मॉस्को शिखर सम्मेलन में सदस्य देशों ने एक समझौते के माध्यम से सीमा पर सैनिकों की तैनाती को कम करने, गैर-आक्रमणकारी नीति का अनुपालन करने तथा सैन्य अभ्यास नहीं करने के सम्बंध में आम सहमति व्यक्त की है। हालांकि धार्मिक उन्माद एवं अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के सम्बंध में विस्तृत चर्चा सबसे पहले अलमाटी शिखर सम्मेलन में हुयी, जिसके साथ ही सदस्य देशों ने मादक द्रव्यों एवं हथियारों की तस्करी तथा संगठित अपराधों पर अंकुश रखने के प्रयासों पर भी गहन विचार विमर्श किया था और सहयोग की संकल्पना पर आधारित संयुक्त घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए गये थे।

इन देशों अवैध ड्रग ट्रेफिकिंग, ह्यूमन ट्रेफिकिंग और यूरेनियम की अवैध ट्रेफिकिंग भी होने लगी। जिसके दुःपरिणाम भविष्य में दुनिया को झेलने पड़े। वर्ष 2001 में सदस्य देशों ने 1972 की एंटी बैलेस्टिक मिसाइल संधि को समर्थन देने की घोषणा की और इसके साथ ही उन्होंने आतंकवाद एवं अलगाववाद के विरुद्ध संघर्ष करने का भी निर्णय लिया। इन देशों ने अमेरिका की राष्ट्रीय प्रक्षेपास्त्र प्रणाली की कड़ी आलोचना की और विरोध भी किया। दरअसल यह प्रणाली कहने के लिए तो आने वाली इण्टरकाण्टीनेंटल बैलिस्टिक मिसाइलों (आईसीबीएम) अथवा अन्य बैलिस्टिक मिसाइलों के खिलाफ सम्पूर्ण देश को रक्षात्मक शील्ड प्रदान करती है लेकिन एक दूसरा पक्ष यह भी है कि इन मिसाइलों की तैनाती को दुनिया के दूसरे देश अपनी सुरक्षा के लिए चुनौती मानते हैं। ऐसा हो भी सकता है क्योंकि अमेरिका का ग्राउण्ड बेस्ड मिडकोर्स डिफेंस (जीएमडी) सिस्टम, जिसका संचालन अलास्का से होता है, का ऑपरेशनल पार्ट रूस और चीन जैसे देश या उन देशों के लिए जो कभी वारसा पैक्ट का हिस्सा रहे हैं चिंतित करने वाला है। हालांकि अमेरिका एनएमडी प्रणाली के तहत तैनात प्रक्षेपास्त्रों को नष्ट करने की बात की थी जिसमें डकोटा में तैनात मिसाइलें भी शामिल हैं। हालांकि अब तक अमेरिका इस दिशा में कितना आगे बढ़ा है, स्पष्ट नहीं है।

क्या एसीसीओ न्यूक्लियर हैसियत प्राप्त कर रहा है?

शंघाई सहयोग संगठन ने इस दौरान सैन्य सहयोग, साझा खुफिया तंत्रा और काउंटर टेररिज्म के मामले में अमेरिका, यूरोपीय संघ, आसियान, सीआईएस और ओआईसी तक अपनी गतिविधियों को विस्तार देने में भी असफलता अर्जित कर ली, जिसके यह संगठन एक न्यूक्लियर की हैसियत में आ गया। तात्कालिक व दीर्घकालिक रक्षा व सुरक्षा सम्बंधी चुनौतियों से निपटा जा सके इसके लिए संयुक्त युद्धाभ्यासों (ज्वाइंट ड्रिल्स) की शुरुआत हुयी। इन देशों ने पहला युद्धाभ्यास वर्ष 2003 में कजाकिस्तान में किया और दूसरा चीन में। इसके बाद चीन और रूस ने संयुक्त युद्धाभ्यासों को एक रणनीतिक के तहत विकसित करने की योजना बनायी जिसे आप वार-गेम का हिस्सा मान सकते हैं। इन युद्धाभ्यासों को 'शांति मिशन (पीस मिशन) नाम दिया गया है। लेकिन चेलियाबिंस्क (रूस) में यूराल पर्वत के निकट हुए संयुक्त युद्धाभ्यास को देखने के पश्चात पश्चिमी शक्तियों में एक नयी हलचल उत्पन्न होने लगी और वे इस संगठन को नाटो का प्रतिद्वंद्वी बताने लगीं। पश्चिमी विशेषज्ञ यह निष्कर्ष भी निकाल रहे हैं कि शंघाई सहयोग संगठन शीतयुद्धकालीन वारसा पैक्ट का उत्तराधिकारी संगठन साबित हो सकता है। कुल मिलाकर पीस मिशन और नाटो के प्रतिद्वंद्वी संगठन की मान्यताओं के बीच बहस जारी है। इस तरह की गतिविधियां एशियाई महाद्वीप में एससीओ को न्यूक्लियर की हैसियत प्रदान कर सकती हैं।

क्या एससीओ वारसा पैक्ट का उत्तराधिकारी साबित होगा?

शंघाई सहयोग संगठन की बुनियादी संरचना, जियो-पॉलिटिकल एवं रणनीति नजरिया बताता है कि यह संगठन भविष्य में प्रत्येक दृष्टि से दुनिया का सबसे ताकतवर संगठन हो सकता है। लेकिन इस हैसियत को प्राप्त करते ही यह भी संभव है कि इसका टकराव नाटो सहित अन्य देशों या संगठनों से हों। फिर तो इसमें भारत के लिए जितने अवसर हैं उतनी ही चुनौतियां भी होंगी अथवा जितनी संभावनाएं हैं शायद उनते ही अंतरविरोध भी होंगे। इसके साथ यह भी देखने की जरूरत होगी कि शंघाई सहयोग संगठन कहीं ऐसे ध्रुव (पोल) के रूप में स्थापित तो नहीं हो रहा है जो वारसा पैक्ट का उत्तराधिकारी संगठन साबित हो और दुनिया के आंगन तक एक नया शीतयुद्ध फिर ले आए। अगर इस तरह की परिस्थितियां बनीं, या यह स्थिति आयी तो भारत इससे सम्बंधित अंतरविरोधों को किस प्रकार से देखेगा और उनके बीच संतुलन कैसे स्थापित करेगा? हालांकि सबसे पहले हमें यह देखना होगा कि भारत को इस संगठन में स्थायी सदस्य के रूप में प्रवेश मिल जाने के बाद अब कौन-कौन से लाभ हासिल होने की संभावना है।

भारत के लिए लाभदायक होगा या चुनौतीपूर्ण?

एससीओ से भारत को होने वाले लाभ के संदर्भ में सामान्य पक्ष तो यही है कि इससे जुड़ने के बाद भारत को आतंकवाद, नशीले पदार्थों की तस्करी, साइबर सुरक्षा के खतरों और सार्वजनिक सूचनाओं की गतिविधि पर महत्वपूर्ण खुफिया जानकारी साझा करने का अवसर हासिल होगा। चूंकि शंघाई सहयोग संगठन काउंटर-टेरेरिज्म और सुरक्षा के लिहाज से संयुक्त युद्धाभ्यासों का आयोजन करता है, इसलिए भारत को इसके माध्यम से आतंकवाद से लड़ने के लिए व्यापक फलक प्राप्त हो जाएगा। इस स्थिति में शंघाई सहयोग संगठन में जब अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद पर विमर्श या निर्णय लिए जाएंगे तो भारत इस परिधि को बढ़ाकर पाकिस्तान और पाकिस्तान आधारित आतंकी संगठनों तक ले जा सकता है। यदि भारत ऐसा करने में सफल हो गया तो पाकिस्तान पर राजनैतिक और नैतिक दबाव बनाया जा सकता है। दूसरा मुख्य विषय यह है कि शंघाई सहयोग संगठन चूंकि 'एलायंस ऑफ एशिया' के रूप में उभर का सामने आ रहा है, इसलिए एशिया की समस्याओं को सुलझाना उसकी वरीयता में होना चाहिए। ऐसी स्थिति में भारत गतिशील भूमिका (डायनॉमिक रोल) निभाकर महत्वपूर्ण निर्णायक भूमिका में आ सकता है या इसके लिए अवसर प्राप्त कर सकता है। अगर भारत इस भूमिका में सफल हो जाता है तो वह स्वयं को एक बड़ी क्षेत्रीय ताकत के रूप में भी प्रोजेक्ट करने में सफल हो जाएगा। तीसरा लाभ यूरेशियाई अर्थव्यवस्था तक भारत की पहुंच सम्बंधी है। भारत इस संगठन के माध्यम से यूरेशियाई अर्थव्यवस्था से अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को जोड़ सकता है। इस दिशा में सफल हुए प्रयासों को देखा भी जा सकता है। पहला यह कि चाबहार बंदरगाह (ईरान), जिसे भारत के सहयोग से विकसित किया गया है, इस यूरेशियाई आर्थिक क्षेत्र के लिए प्रवेश द्वार (गेट-वे) साबित हो सकता है। दूसरा अफगाबाद करार है। इस समझौते को दो चरणों में पूर्ण होना है। प्रथम चरण में उज्बेकिस्तान, ईरान, तुर्कमेनिस्तान को रेल लाइन से जोड़ा जाना है और दूसरे चरण में समुद्री मार्ग के जरिए ईरान के बंदरगाह अब्बास और चाबहार बंदरगाह तक तट कॉरिडोर विकसित किया जाना है। भारत इसके जरिए यूरेशियाई क्षेत्र के साथ व्यापार एवं व्यवसायिक संपर्क बढ़ा सकता है। यही नहीं अफगाबाद करार के फलस्वरूप भारत को जो अंतर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा 'इंटरनेशनल नार्थ-साउथ ट्रांसपोर्ट कॉरिडोर' (आईएनएसटीसी) उपलब्ध हो रहा है, वह भारत के लिए एक बड़ा अवसर साबित हो सकता है। इन अवसरों के बीच/सापेक्ष आर्थिक गतिविधियों के संरक्षण और आर्थिक लाभांशों को अर्जित करने के लिए शंघाई सहयोग संगठन महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। परन्तु इसके लिए आवश्यक होगा कि भारत इस क्षेत्र की पॉलिटिकल-इकोनॉमिक डायनामिक्स समझने और जियो-स्ट्रैटेजिक क्षेत्र में अपने प्रभाव का प्रदर्शन करने में कामयाब हो।

कुछ बुनियादी अंतर्विरोध भी हैं?

किसी भी क्षेत्रीय या अंतर्राष्ट्रीय फोरम में शामिल होकर, उसमें व्याप्त अवसरों को लाभांशों में बदलने के लिए यह आवश्यक होता है कि उसके अंतर्विरोधों को समझा जाए और उनके बीच संतुलन बनाने की कोशिश हो। लेकिन यदि ये अंतर्विरोध बुनियादी हैं तो मतभेदों (अथवा टकरावों) का समाधान मुश्किल होता है और उन स्थितियों में लाभांश सुनिश्चित नहीं हो पाते। ध्यान रहे कि चीनी अधिकारियों ने भारत और पाकिस्तान के सदस्य के रूप में शामिल होते समय चेतावनी देते हुए कहा था कि इन दोनों सदस्य देशों को एससीओ चार्टर के अनुच्छेद 1 में उल्लिखित 'अच्छे पड़ोसी' की भावना का सख्ती से पालन करना होगा। दूसरा पक्ष यह है कि एससीओ चार्टर द्विपक्षीय मुद्दों को उठाने का भी प्रतिषेध करता है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि भारत प्रत्यक्ष रूप से आतंकवादी गतिविधियों के लिए पाकिस्तान को कठघरे में खड़ा नहीं कर पाएगा। दूसरा विरोधाभासी तथ्य यह है कि भारत द्वारा संयुक्त राष्ट्र महासभा में पाकिस्तानी आतंकी मसूदा अजहर के विरुद्ध लाए गये प्रतिबंधात्मक प्रस्ताव पर चीन दो बार वीटो कर चुका है, बहाना सिर्फ इतना है कि आधारभूत तथ्य नहीं हैं। यानि चीन-पाकिस्तान आधारित आतंकियों का समर्थन करता है और पाकिस्तान को ऑल वेदर फ्रेंड बताकर अनक्वालीफाइड मदद देता है जिसका प्रयोग वह भारत के खिलाफ करता है। क्या चीन एससीओ के मंच पर अपनी इस मनोग्रंथि से उबर पाएगा? तीसरा- मॉस्को-बीजिंग की मंशा वाशिंगटन को कमजोर करना है और वे इस संगठन का प्रयोग इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए करना चाहते हैं जबकि भारत का ऐसा कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि भारत वाशिंगटन के साथ मैत्री संबंध रखता है और उसके साथ भारत के रणनीतिक रिश्ते हैं। फिर भारत इस संगठन में किस तरह की भूमिका का चुनाव करेगा? चौथा-

भू-राजनीतिक दृष्टि से भी शंघाई सहयोग संगठन क्षेत्र अब पूरब और पश्चिम के बीच सेतु की हैसियत प्राप्त कर ले गया है। चूंकि यह संगठन विशाल भौगोलिक क्षेत्र के साथ-साथ विशाल बाजार और विशाल सैन्य आकार भी लिए हुए है इसलिए यह सीधो तौर पर न सही तो अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही नाटो को चुनौती दे रहा है। ऐसी स्थिति में जब यह संगठन एक सैन्य गठबंधन के रूप में सामने आ रहा हो तब भारत को इसमें शामिल होने का मतलब है कि उसने अपनी गुटनिरपेक्षता की नीति त्याग दी। क्या भारत ऐसा घोषित कर सकेगा? पांचवा-हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि चीन की 'बेल्ट रोड इनीशिएटिव' (बीआरआई) प्रोजेक्ट सम्बंधी विचार के पीछे मुख्य प्रेरक एससीओ ही था। इस प्रोजेक्ट के जरिए बीजिंग ने यूरेशिया में अरबों डॉलर की अतिरिक्त वित्तीय आपूर्ति करने का वचन दिया है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यह क्षेत्र भी उसकी चेक डिप्लोमैसी का हिस्सा है। दूसरी तरफ चाइना-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर, पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से होकर जाएगा जो कि भारत की सम्प्रभुता और अखण्डता के लिए सीधी चुनौती साबित होगा। फिर तो भारत को एससीओ के मंच पर चीन के इस प्रोजेक्ट का विरोध करना पड़ेगा और यह तभी संभव है जब अधिकांश देश भारत के पक्ष में हों, क्या ऐसा हो पाएगा? छठा- भारत एक तरफ मनीला में एक समझौते के जरिए अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ चतुर्भुज (क्वैड) के रूप में एलायंस करता है जिसका उद्देश्य ऊपरी तौर पर कनेक्टिविटी और मैरीटाइम सिव्योरिटी है लेकिन मुख्य लेकिन छुपा हुआ उद्देश्य चीनी गतिविधियों को रोकना है विशेषकर दक्षिण चीन सागर में। दूसरी तरफ शंघाई सहयोग संगठन का छद्म उद्देश्य अमेरिकी विस्तारवादी नीति को रोकना और मध्य-एशिया में उसके प्रभाव को समाप्त करना है। ऐसे में भारत इस फोरम का प्रयोग किस रूप में करेगा और किस उद्देश्य से? सातवां- शंघाई सहयोग संगठन के सदस्य देशों के पॉलिटिकल मॉडल अलग-अलग हैं। इन पॉलिटिकल मॉडल्स के कारण ही कुछ बुनियादी टकराव हैं, विशेषकर भारत और चीन के बीच। इस विरोधाभास में भारत अपनी जगह किस तरह से बनाएगा? आठवां- भारत और चीन के बीच कुछ इश्यूज हैं जिनके समाप्त न होने तक भारत और चीन के बीच सीमा पर व्यक्त अथवा अव्यक्त रूप से संघर्ष की स्थिति बनी रहेगी। क्या शंघाई सहयोग की भावना का आदर भारत चीन से करवा पाने में सफल हो पाएगा? नवां- भारत दक्षिण एशिया का एक न्यूक्लियस स्टेट और उपमहाद्वीपीय शक्ति है। ऐसे में उसका यह दायित्व बनता है कि उस क्षेत्रीय संगठन को आगे ले जाए जो इस क्षेत्र की एकता, विकास और सामाजिक उत्थान के लिए जरूरी है। लेकिन भारत और पाकिस्तान के आपसी मतभेद के कारण दक्षेस (सार्क) महत्वहीन हो गया। यहां तक भारत ने सार्क में पाकिस्तान के साथ बैठने से इन्कार दिया है, लेकिन वह क्विंगदाओ में शंघाई सहयोग संगठन के मंच पर बैठा। कुल मिलाकर एससीओ फोरम तमाम विरोधाभासी हितों (मल्टीपल कान्क्लिक्टिंग इंटेरेस्ट) का जमावड़ा है, जिसमें भारत को अपने रणनीतिक उद्देश्य सुनिर्धारित कर अपने हितों को तलाशना है।

कुछ उलझने सुलझानी होगी

फिलहाल शंघाई सहयोग संगठन को एक तरफ अवसरों के मंच के रूप में और दूसरी तरफ चुनौतियों के संकुल के रूप में रखकर देखना होगा और यह सवाल करना होगा कि मसूद अजहर जैसे आतंकियों के मामले में चीनी स्टैंड में अभी भी कोई परिवर्तन है या हाल-फिलहाल में इसमें बदलाव आने की संभावना है। क्या चीन ने एनएसजी में प्रवेश और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के मामले में अपना मनोविज्ञान बदला है। रूस भी अफगानिस्तान के मामले में अपने परम्परागत मित्र भारत से विचलित होते हुए पाकिस्तान के साथ एलायनमेंट करने की ओर अग्रसर है और मॉस्को-बीजिंग-इस्लामाबाद त्रिकोण की प्रबल संभावनाएं देखी जा रही हैं। क्या वे भारत के समक्ष उत्पन्न होने वाली चुनौतियों को देखते हुए इस दिशा में कदम बढ़ाने से हिचकेंगे? बीजिंग अफगानिस्तान में हेजिंग यानि आसान फंड मुहैया कराकर बड़ा दांव लगा रहा है और अफगानिस्तान, पाकिस्तान व तजाकिस्तान के जरिए एक ऐसे उप-क्षेत्रीय समूह का निर्माण कर रहा है जो भारतीय हितों के प्रतिकूल होगा। शंघाई सहयोग संगठन के कुछ अन्य सदस्य भी चीन के बीआरआई प्रोजेक्ट के पक्षधर हैं, जबकि भारत इसका विरोध कर रहा है। उल्लेखनीय है कि 1995 में किर्गिस्तान और कजाकिस्तान ने जब पाकिस्तान के साथ 'द क्वाड्रिलैटरल ट्रांजिट एग्रीमेंट' (क्यूटीटीए) पर हस्ताक्षर किए थे तब उन्होंने भारत की सम्प्रभुता क्षेत्र की रेड लाइन पार करने की कोशिश की थी क्योंकि इसमें कराकोरम हाइवे को ट्रांजिट कॉरिडोर के रूप में गिलगित-बाल्टिस्तान से होकर पास होना था। यह अलग बात है कि तब क्यूटीटीए व्यवहारिक रूप प्राप्त नहीं कर सका लेकिन अब तजाकिस्तान पुनः

क्यूटीटीए से जुड़ चुका है और कजाकिस्तान सीपेक के प्रति अपनी रुचि प्रकट करता देखा जा रहा है। यदि हाल की संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट को गम्भीरता से देखें तो पता चलता है कि सीपेक आर्थिक एकीकरण की सुविधा की बजाय अस्थिरता का चालक बन सकता है। और यदि सीपेक पाकिस्तान के साथ भारत के सम्बंधों पर दबाव बनाएगा तो क्यूटीटीए भी एससीओ के अन्य देशों के साथ मिलकर भारत के सम्बंधों को प्रभावित करेगा अथवा भारत की क्षमता को डेंट करेगा। अब बड़ा सवाल यह है कि भारत इन उलझनों को कैसे सुलझाएगा?

जो देश लगातार भारत की सीमा व आंतरिक सुरक्षा को खतरे में डाल रहे हैं, अमर्यादित एवं अनैतिक आचार कर रहे हैं, अब इस मंच पर उसे उनके प्रति मर्यादा, मित्रता एवं नैतिकता का प्रदर्शन करना है। जो सेना भारत को दुश्मन नम्बर एक मानती है और अपने देश में जमा किए गये आतंकी संगठनों तथा किराए के आतंकवादियों के जरिए भारत के खिलाफ निरन्तर छद्म युद्ध लड़ रही है, उसके साथ भारत शंघाई सहयोग संगठन के झंडे के नीचे आतंकवाद के खिलाफ लड़ने हेतु युद्धाभ्यास करेगा। यह कुछ विचित्र सा विषय नहीं है? उल्लेखनीय है कि भारतीय और पाकिस्तान सैन्य टुकड़ियां चीन में 'फैनफेयर फॉर पीस मिलिटरी टैटू' और 'पीस मिशन 2018' में हिस्सा लेगीं। पीस मिशन 2018 आतंकवाद विरोधी संयुक्त युद्धाभ्यास (ज्वाइंट काउंटर टेरेरिज्म ड्रिल) है जबकि नई दिल्ली कई बार यह घोषणा कर चुकी है कि पाकिस्तान आतंकवाद को संरक्षण दे रहा है और उसके जरिए वह भारत के खिलाफ प्रॉक्सी वार लड़ रहा है। क्या चीन चेक डिप्लोमैसी और स्ट्रिंग ऑफ पल्स के जरिए क्षेत्रीय प्रतिस्पर्धा में जो नए आयाम जोड़ रहा है, जो भारत की सुरक्षा के लिए सीधी चुनौती पेश करते हैं, क्या चीन इन गतिविधियों को छोड़कर शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, शांतिपूर्ण सहयोग और पारस्परिक हितों की संवृद्धि की भावना का विकास कर सकेगा? इस तरह के बहुत से प्रश्न हैं, जो भारत भारत की उलझनों और चुनौतियों को पेश करते हैं। इन्हें भारत को सुलझाना होगा तभी इस संगठन से प्राप्त होने वाले लाभांश हासिल हो सकेंगे, अन्यथा नहीं।

निष्कर्ष की ओर

कुल मिलाकर शंघाई सहयोग संगठन के उद्घाटन और प्रगतियों से जुड़े पक्ष यह स्पष्ट करने में सफल हैं कि यह संगठन एक इकोनॉमिक जोन/ब्लॉक के साथ-साथ एक पॉलिटिको-मिलिट्री एलायंस है, जिसमें 'वार गेम' की विशेषताएं भी देखी जा सकती हैं। अब भारत को यहां कुछ बातें तय करनी हैं। पहली यह कि क्या भारत अपनी गुटनिरपेक्षता की नीति त्याग रहा है? क्या भारत पूर्व और पश्चिम के नये उभरते मंचों के बीच उलझने की तरफ बढ़ रहा है, यदि नहीं तो वह संतुलन किस तरह से स्थापित करेगा? दूसरी- भारत इस मंच पर किस रूप में उपस्थित हो रहा है। एक महाद्वीपीय ताकत (कांटेनेंट पावर) के रूप में अथवा महासागरीय शक्ति (मैरीटाइम पावर) के रूप में। बिना इसके भारत एससीओ का अपेक्षित लाभ नहीं उठा पाएगा क्योंकि अब प्रतिस्पर्धा गैर-सम्भ्रांतवादी है जिसमें लाभ शक्ति से ही अर्जित किया जा सकता है आग्रह से नहीं। फिलहाल तो यही कहा जा सकता है कि शंघाई सहयोग संगठन के मंच पर स्वयं को स्थापित करने अथवा इस यूरोशियाई आकाश में उड़ने वाले 'वन्य स्वान हंसों' (वाइल्ड स्वान गीज़) के झुंड में स्वयं का स्थान सुनिश्चित करने में भारत को अभी बहुत मशक्कत करनी पड़ेगी। यानि भारत को यदि शंघाई सहयोग संगठन से लाभ लेना है तो उसे गहन होमवर्क और बेहतर रणनीति के साथ विदेश नीति के रीयल पॉलिटिकल ट्रैक पर आगे बढ़ना होगा।